आखर हिंदी पत्रिका ; e-ISSN-2583-0597 खंड 5/अंक 2/जून 2025
Received: 23/05/2025; Accepted: 24/06/2025; Published: 28/06/2025

21वीं सदी के उपन्यासों में वृद्ध जीवन

- म. पोन्नैया भूपति राजा,
शोधार्थी,
मद्रास विश्वविद्यालय
मेरीना काँपस, चेन्नै -5.
फोन.नं.9003402602
Email.ponnaiahbhoopathiraja@gmail.com

म. पोन्नैया भूपति राजा, 21वीं सदी के उपन्यासों में वृद्ध जीवन, आखर हिंदी पत्रिका, **खंड 5/अंक 2/जून 2025**,(118-123) https://doi.org/10.5281/zenodo.15776828

This work is licensed under CC BY-NC 4.0

मनुष्य के जीवन काल में शैशवावस्था, किशोरावस्था, युवावस्था जितनी महत्वपूर्ण अवस्थाएँ हैं, उतना ही महत्वपूर्ण है वृद्धावस्था भी। यह अवस्था जितनी दुखदायी है, उतनी ही सुखदायी भी है। यह इसलिए सुखदायी और महत्वपूर्ण है कि व्यक्ति अपने आजीवन अर्जित अनुभवों से खुद संतुष्टमय जीवन जीता है और समाज के लिए भी अपने अनुभवों से भावी पीढ़ी और समाज को मार्गदर्शन भी करता है। इस अवस्था में वृद्ध परिपक्व मानसिकता के होते हैं और अनुभव के भंडार भी। वे अपने उन अनुभवों के माध्यम से नई पीढ़ी को ही नहीं, समाज और देश का भी मार्ग निर्देश करने में सक्षम रहते हैं।

प्राचीन काल में सनातन धर्म के व्वस्थापकों ने मनुष्य जीवन काल को 4 अवस्थाओं में विभाजित करते हुए एक-एक अवस्था के स्वरूप, लक्षण और कर्तव्य-कर्मों का निर्देश दिया था। इन चारों अवस्थाओं को आश्रम व्यवस्था के अंतर्गत नियोजित किया गया था। व्यक्ति जीवन के प्रथम 25 वर्ष की अवधि को ब्रह्मचर्य आश्रम, दूसरे 25 वर्ष की अवधि को गृहस्थाश्रम, तीसरे 25 वर्ष की अवधि को वानप्रस्थ आश्रम और अंतिम 25 वर्ष अर्थात् व्यक्ति के 75 वर्ष के उपरांत सन्यास आश्रम के रूप में विभाजित कर केवल व्यक्ति के सुनियोजित जीवन व्यवस्था का प्रतिपादन ही नहीं, अपितु सामाजिक व्यवस्था को भी क्रमबद्ध करने के निगूढ़ अर्थ को भी प्रतिपादित किया गया था। प्राचीन काल के इस आश्रम व्यवस्था के प्रतिपादन में व्यक्ति के क्रमबद्ध और संतुलित

जीवन का रूप प्रतिबिंबित हुआ है। ब्रह्मचर्य आश्रम में विद्याध्ययन, ज्ञान-विज्ञान की प्राप्ति, संयमित और अनुशासित जीवन आदि पर बल दिया गया है। गृहस्थाश्रम में व्यक्ति विवाह संस्कार से युक्त होकर गृहस्थ जीवन जीते हुए धर्मबद्ध होकर अर्थ कमाते हुए, भौतिक इच्छाओं की पूर्ति और धार्मिक अनुष्ठानों का निर्वाह करते हुए मोक्ष मार्ग के लिए आवश्यक कार्य आचरण का प्रतिपादन किया गया है। 50 वर्ष के बाद व्यक्ति को अपने गृहत्थाश्रम का त्याग कर वन के लिए पत्नी समेत वन प्रस्थान का निर्देश दिया गया है। वन में अन्य वानप्रस्तों के साथ रहते हुए, आध्यात्मिक जीवन के साथ साथ ब्रह्मचारियों को ज्ञान-विज्ञान की शिक्षा देने के द्वारा नई पीढ़ी को जीवन की सफलता की ओर अग्रसर करने का मार्ग सुझाया गया है। सन्यास आश्रम में व्यक्ति सब प्रकार की चिंताओं और इच्छाओं से मुक्त होकर तपस्या करते हुए मोक्ष की ओर अग्रसर होने का मार्ग दिखाया गया है। व्यक्ति के लौकिक और पारलौकिक जीवन का समन्वय इस सनातन आश्रम व्यवस्था मूल उद्देश्य रहा था। लेकिन, समय परिवर्तन के साथ आश्रम व्यवस्था की ज़ड भी हिलने के कारण धीरे-धीरे इस व्यवस्था का अंत हो गया है। आज के विकसित ज्ञान-विज्ञान, प्रौद्योगिकी, आर्थिक व्यवस्था मे बदलाव आदि के कारण जीवन के लक्ष्य भी बदले हैं। जीवन के प्रति दृष्टिकोण में बदलाव आया है। जीवन भोगने के लिए माननेवाली पाश्चात्य संस्कृति और मानसिकता आधुनिक पीढ़ी में हावी हुई है। अर्थ कमाने और काम की पूर्ति की कोई आयु की सीमा अब नहीं रह गई है। वृद्धावस्था में माता-पिता का बोझ संतान को ढ़ोना पड़ पर रहा है। ऐसे में आजकल के आर्थिक परिवेश में माता-पिता का पोषण संतान के लिए भार बन गया है। इससे माता-पिता को बीच सड़क में छोड़ने की संस्कृति विकट रूप धारण करती जा रही है। यदि संपन्न संतान हों, तो माता पिता को वृद्धाश्रम में रखा जा रहा है। यही नहीं, पीढी का अंतराल, परिवार के सदस्यों के प्रति प्रेम और आत्मीयता का अभाव, संपत्ति की लालच, स्वार्थ, बेसब्र आदि वृद्ध समस्याओं के मूल कारण रहे हैं। पीढ़ी के तराल के कारण वृद्ध ऐसे पड़ाव पर पहुँचकर ऐसा मेहसूस करने लगें हैं कि मानो वे एक नई दुनिया में रह रहे हैं। वृद्ध की उम्र बढ़ने के साथ-साथ कई बीमारियों का शिकार होना भी सावाभाविक ही है। इन स्थितियों में वह अकेले जीवन जीनेके लिए मजबूर होता है और परिवार की उपेक्षा का शिकार बनता है।

आज के समाज में दिन-ब-दिन बढ़ती जा रही वृद्धों की समस्याओं पर विचार-विमर्श की एक चिंतन धारा का विकास हुआ है। आज का साहित्यकार वृद्धों के जीवन को आधार बनाकर उनके जीवन के विविध पक्षों पर विचार करने पर उतरा है। वैसे तो, हिन्दी साहित्य जगत् में ऐसे कई उपन्यास और कहानियाँ लिखे गये हैं कि उन सभी में वृद्धों के दुखभरी जीवन का यथार्थ चित्रण किया गया है। 21वीं सदी से पूर्व भी ऐसे साहित्य का भण्डार मिलता है, जहाँ वृद्धों के जीवन पर चर्चा की गई थी। प्रेमचंद की पंचपरमेश्वर, कमलेश्वर की चीफ़ की दावत आदि ऐसी कहानियों की कोटि में आती हैं, जो वृद्ध अपने ही लोगों के द्वारा शोषण के शिकार बनते हैं। यदि देखा जाय तो, उन कहानियों का परिवेश सीमित था। व्यक्ति की लालच वृद्धों की यातनाओं का कारण रही थी। लेकिन, आजकल संसार का दायरा उससे कई गुनाह विस्तृत हो गया है। आज व्यक्ति गाँवों से शहर, नगर, महा नगर, और देश-विदेशों में बस रहा है। ऐसे में उसे भी दुख-दर्द, विवशताएं और विडंबनाएँ को झेलना पड़ रहा हैं। संतान के जीवन के तौर तरीके वृद्ध जीवन को प्रभावित करते हैं। वे अपने माता-पिता के प्रति समर्पित होने में खुद को अक्षम पाते हैं। वे अपनी व्यस्थता के कारण वृद्ध माता – पिता के साथ न्याय नहीं कर पाते। जो व्यक्ति युवावस्था में अपने स्वजनों के साथ बैठकर आराम से दो एक-बात करने तक का समय नहीं दे पाया,

वही जब सेवा निवृत्त हो जाता है, तो उसका समय कटता ही नहीं। फिर वहीं स्थिति उसके साथ भी दुहराती है कि उसकी संतान अपना समय उसे देने में असमर्थ पाती है। वह फिर अपने माता-पिता की तरह अकेले जीवन जीने के लिए मज़बूर हो जाता है। ऐसे में चंद वृद्ध खुद को चुस्त रखने का भरसक प्रयत्न करते हैं , जबकि चंद मृत्यु की इंतजार में खाली बैठे रहते हैं। बहुतेरे लोगों को अकेलापन अभिशाप लगता है, तो कुछ को वरदान। स प्रकार आजकल वृद्ध जीवन के कई आयाम उभरकर आये हैं। 21वीं सदी में वृद्ध जीवन और वृद्ध विमर्श साहित्य का एक एक प्रधान वि,य बन गया है। वृद्ध जीवन को आधार बनाकर कथा साहित्य लिखनेवाले लेखक और उनका कथा साहित्य भी 21वीं सदी में अत्यंत विपुल रहा है।

भारतीय परिवार में हर परिवार के मां-बाप अपने बच्चों का लालन पालन बड़े ध्यान से करते हैं। उन्हें आत्मावलंबी बनने का भरसक प्रयत्न करते हुए, उन्हें उचित शिक्षा देने का प्रबंध करते हैं। जब वे अपने पैरों पर खड़े होने में सक्षम हो जाते हैं, तो वृद्ध मां-बाप को भूलकर उन्हें अकेले छोड़कर चले जाते हैं। ऐसे में आजकल वृद्ध कॉलोनियाँ जन्म ले रही हैं, जिस में घर होते हैं और घरों में सिर्फ वृद्ध दंपति रहती है। आजकल के वृद्ध जीवन की विडंबनात्मक स्थिति का चित्रण ममता कालिया के **दौड़** उपन्यास में मिलता है। इस उपन्यास की रेखा को जब अपने दूसरे बेटे सघन के नौकरी की फेर में घर छोड़कर बड़ा बेटा पवन के साथ चले जाने की स्थिति आती है, तो व्याकुल होकर कहती है- **"इसको भी ले जाओगे, तो हम दोनों बिलकुल अकेले ही रह जाएंगे। वैसे ही यह सीनियर सिटीजन कॉलोनी बनती जा रही है। सबके बच्चे पढ़ लिख कर बाहर चले जा रहे हैं। हर घर पर समझो एक बूढ़ा, एक बूढी, एक कुत्ता और एक कार, बस यह रह गया है"**[1]। वृद्ध जनों के अकेलेपन का इससे बड़े मार्मिक शब्दों में उतारना शायद ही संभव है। इससे स्पष्ट होता है कि आजकल वृद्धों के नाम से एक कालोनी का निर्माण हो रहा है।

आजकल वृद्ध माता-पिता की मृत्यु के समय न संतान रहती है और ना ही उसके मृत्योपरांत दाह संस्कार के लिए आना भी मुमकिन हो गया है। संतान को भारत आने तक मार्चुअरी में शव को रखना पड़ता है। यह क धार्मिक विश्वास है कि सूर्यास्त से पूर्व दाह संस्कार होना चाहिए। यदि एक रात गुज़र जाती है, तो उसे बाँसी शव कहने की रिवाज़ है। माता-पिता को जीते जी सुखी न रख पानेवाली संतान मरने के पश्चात् भी उनकी आत्मा को सुख देने में असमर्थ हो रही है। इसी उपन्यास के सिद्धार्थ अपने वृद्ध पिता की अकस्मात मृत्यु की खबर सुनने पर भारत तुरंत लौटकर अंतिम संस्कार करने के विचार के बजाय पिता के पार्थिव शरीर को मुर्दाघर में रखने की सलाह देते हुए कहता है – **"आप मुरदाघर में रखवा दीजिए। यहाँ तो महीनों बॉडी मार्च्यूरी में राखी रहती है। जब बच्चों को फुर्सत होती है फ्यूनरल कर देते हैं।"**[2] सिद्धार्थ के इन शब्दों में गिरते मानव मूल्य की चरम सीमा झलकती है।

चित्रा मुद्गल के 'गिलिगडु' उपन्यास में वृद्ध की देखभाल में घर के सदस्यों के द्वारा दिखाये जानेवाली निर्लिप्त भावना का चित्रण ही नहीं किया गया है अपितु संपत्ति केलिए वृद्धाश्रम में भेजने की करुण कथा को भी चित्रित किया गया है। रिटायर्ड सिविल इंजीनियर बाबू जसवंत सिंह को अपने बेटे के घर में समय पर खाना नहीं मिलता है और चाय के वक्त बचे सीले बिस्किट्स दिए जाते थे। उन्हें इस विषय पर बड़ा दुख होता है कि बहू सुनयना के लिए उनके पेट से बेहतर रद्दी की टोकरी दूसरा कोई नहीं हो सकता। बाद में उनको यह पता

चलता है कि कानपूरवाले उनके घर को बेचकर उन्हें वृद्धाश्रम में भर्ती करवाने का विचार अपने बेटा और बेटी दोनों मिलकर करते हैं। बाबू जसवंत सिंह की बेटी शालिनी अपने भाई के निर्णय के बारे में पिता से कहती है - **"उन्होंने पता लगाया है कि नोएडा के सेक्टर पचपन में कोई आनंद निकेतन वृद्धाश्रम है, क्यों न उनके रहने की व्यवस्था वहीं कर दी जाए।"**[3] तो उनका दिल टूट जाता है।

वृद्धावस्था में जब पति की मृत्यु हो जाती है, तो वृद्ध विधवा नारी अपने स्वजनों के आसपास रहकर किसी न किसी तरह जीवन यापन कर लेती है। जबकि वृद्ध विधुर की स्थिति बहुत ही दयनीय होती है । निर्मल वर्मा के 'अंतिम अरण्य' उपन्यास के मेहरा साहब इसी अवस्था में मृत्यु की इंतजार में बैठे रहते हैं और अपने को अकेलेपन में खो जाना चाहते हैं। जब डॉक्टर सिंह, मेहरा साहब की जांच करने आते हैं, तो वह धीमे स्वर में बुदबुदाते हैं कि **"कितनी बार कहा है मुझे अकेले छोड़ दीजिए । मुझ पर मेहरबानी कीजिए । लीव मी एलोन, प्लीज... प्लीज.... प्लीज..."**[4]

चंद वृद्ध विधुर मजबूरीवश अपने अकेलेपन से मुक्त होने के लिए किसी एक नारी के सांगत्य में रहना हैं चाहते हैं । वे पुनर्विवाह करने में अकेलेपन की समस्या का समाधान ढूँढते हैं। रवींद्र वर्मा के 'पत्थर ऊपर पानी' उपन्यास के 75 साल के रामचंद्र का भी ऐसा वृद्ध हैं डो अपने हृदय की रिक्तता को भरना चहते हैं । वे बीच सड़क में अपने ही पुत्र द्वारा छोड़ी गई वृद्ध विधवा सीता देवी से साथ रहने का प्रस्ताव रखते हैं कि- **"हम शादी कर लें?", "साथ रहने की क्या कोई उम्र होती है जब तक उम्र है हम साथ रह सकते हैं?"**[5] कृष्णा सोबती के 'समय सरगम' उपन्यास का ईशान भी अपने अकेलेपन से मुक्त होने के लिए अविवाहिता वृद्धा आरण्या को अपने फ्लैट में जगह देना चाहते हैं कि **"आरण्या, जो कहने जा रहा हूँ उसे हँसी में मत उड़ाना। अगर मैं यह कहूँ कि एक कमरा, एटैच बाथरूम-एक बालकनी तुम्हारे लिए मेरे फ्लैट में ही मौजूद है।"**[6] । अंत में आरण्या भी उसे स्वीकार कर लेती है ।

पत्नी की मृत्यु के बाद वानप्रस्थ के रूप में चंद वृद्ध लोग अपने परिवारवालों से अलग रहना चाहते हैं। भले ही वह उसका नाम वानप्रस्थ दें, लेकिन उसमें भी उन्हें नौकर, पड़ोसी मित्रों की सहायता की जरूरत पड़ती है । रमेशचंद्र शाह के 'सफेद पर्दे पर' उपन्यास के वृद्ध मेहरा खुद सोचते हैं **"अच्छा वानप्रस्त है यह तुम्हारा , जिसमें तुम्हें एक ओर दत्ता संपत्ति का सहारा चाहिए और दूसरी ओर रामरतिया का ।"**[7] कुछ साधन युक्त वरिष्ठ लोग सोचते हैं कि किसी एक गैर सरकारी संस्था की स्थापना करके या उसमें शामिल होकर समाज के कल्याणकारी कार्यों में जुड़कर व्यस्त हो जाएं, ताकि वे सकारात्मक और सार्थक जीवन यापन कर सकें । इसी उपन्यास के रिटायर्ड आई.ए.एस. अधिकारी सप्रे साहब अपने बूढ़े मित्र मेहरा से कहते हैं कि **"देखो, मैं एक एन.जी.ओ. स्टार्ट करने वाला हूँ, जो अपने ढंग का अनूठा होगा। ऑस्ट्रेलिया की एक संस्था मुझे इसके लिए खासा आर्थिक अनुदान मुहैया कराने को तैयार है।"**[8] उस एन.जी.ओ. के प्रस्तावित कार्यक्रमों के बारे में वे आगे

कहते हैं कि **"हमारे प्रोजेक्ट में वैकल्पिक शिक्षा, पानी जुटाने के पारंपरिक तरीकों के पुनरुद्धार और नए तरीकों की खोज तो मुख्य रूप से है ही, साथ में योग और विपश्यना के सघन प्रशिक्षण शिविर चलाने की योजना भी शामिल है।"**[9] और इस प्रोजेक्ट के कार्यान्वयन में पूर्ण रूप से वे तुले रहते हैं। इसी प्रकार गोविंद मिश्र के 'शाम की झिलमिल' उपन्यास का बूढ़ा अरविंद आध्यात्मिक विषय को लेकर चलने वाले एक संस्थान में सांस्कृतिक कार्यक्रमों को आयोजित करने वाली समिति से जुड़ जाते हैं। वहां के औपचारिक और स्वार्थपूर्ण कार्यशैली व कार्यक्रमों को देखकर एकदम ऊब जाते हैं। धीरे-धीरे अपने को ऐसे संस्थानों से बचाकर रखते हैं।

समाज में अपनी शान बढ़ाने के चक्कर में और बच्चों का अच्छा भविष्य बनाने के उद्देश्य से मां-बाप अपनी सारी जमा पूंजी को लगाकर और जरूरत पड़ने पर कर्ज भी लेकर उच्च शिक्षा के लिए अपने बच्चों को विदेश भेजते हैं। उनका एकमात्र अपेक्षा रहती है कि वे वहां पढ़कर स्वदेश लौटें और अच्छी नौकरी पाकर वृद्ध मां-बाप की सेवा करें या कम से कम उनके साथ रहें। लेकिन प्रायः उनकी आशा में पानी फिर जाता है और वे मन मसोसकर रहने में विवश हो जाते हैं। डॉ सूरज सिंह नेगी के 'वसीयत' उपन्यास के सेवा निवृत्त विश्वनाथ भी मां-बाप को भूल जानेवाले अपने बेटे राजकुमार के बारे में अपनी पत्नी सुधा से कहते हैं - **"शादी मनपसंद कर ली तो बहू से आशीर्वाद लेने तो हमारे पास लाता। क्या सचमुच विदेशी शिक्षा पाकर वह अपनी संस्कार ही भूल चुका है?"**[10]

धन की लालच में चरित्रहीन बनते जाने वाले पुत्र के व्यवहार से वृद्ध मां-बाप का हृदय विदीर्ण हो जाता है। 'गिलिगडु' उपन्यास के रिटायर्ड कर्नल स्वामी का बड़ा बेटा श्री नारायण अपने पिता के सामने प्रस्ताव रखता है कि वे नोएडा के चार कमरे वाले बड़े फ्लैट को बेचने पर जो रकम मिलती है उसे तीनों भाइयों को बांट दें। जब कर्नल स्वामी उसे ठुकरा देते हैं, तो कृद्ध नारायण अपने ही वृद्ध पिता के ऊपर हाथ उठाता है। उनके रोने चीख़ने की आवाज़ सुनकर उनके पड़ोसी मित्र श्रीवास्तव दंपति का दिल दहल उठता है। बाबू जसवंत सिंह से आर्द्र स्वर में मिसेज़ श्रीवास्तव कहती हैं - **"ऐसी कसाई औलाद से आदमी निपूता भला। हमें इस बात का कोई गम नहीं कि हमारी कोई अपनी औलाद नहीं।"**[11]

इस प्रकार पैतृक संपत्ति के मोह में पड़कर हिंसक बननेवाली युवा पीढ़ी को असली संपत्ति का बोध कराता है डॉ सूरज सिंह नेगी का वसीयत उपन्यास। इस उपन्यास का विश्वनाथ अपने सेवा काल की भाग दौड़ भरी जिंदगी में बूढ़े मां-बाप की उपेक्षा करता आता है। यहां तक कि जब अपनी बूढी मां का स्वास्थ्य बिगड़ की खबर मिलती है, तो वह उसकी परवाह किए बिना ट्रेनिंग के लिए विदेश चला जाता है। मां-बाप की मृत्यु के बाद अपने पिता द्वारा लिखी गई वसीयत विश्वनाथ को मिलती है, तो वह यह सोचता है कि कोई विशेष संपत्ति मिलने जा रही है। लेकिन, उसमें यह लिखा होता है कि - **"मेरे पुरखों द्वारा आजन्म परोपकार, परहित, त्याग, समर्पण और सत्य का पालन करते हुए संस्कार, जीवन मूल्य तथा सिद्धांतों के साथ जीवन - यापन किया गया जिनका अनुसरण मैंने अपने संपूर्ण जीवन काल में किया। यही मेरी असल कमाई है जिसे मैं आज अपने विश्वा के नाम वसीयत के रूप में समर्पित करता हूँ।"**[12]

इस प्रकार, इक्कीसवीं सदी के उपन्यासों में उपन्यासकारों ने न केवल वृद्धजनों की दयनीय जीवन का चित्रण हुआ है बल्कि उनके समाधान का भी दिशा निर्देश वसीयत जैसे उपन्यासों के द्वारा दिया है।

संदर्भ सूची :

1) पृ. सं. 40, ममता कालिया, 'दौड़', वाणी प्रकाशन
2) पृ. सं. 80, ममता कालिया, 'दौड़', वाणी प्रकाशन
3) पृ. सं. 97, चित्रा मुद्गल, गिलिगड़ू, सामयिक प्रकाशन
4) पृ. सं. 129, निर्मल वर्मा, अंतिम अरण्य, वाणी प्रकाशन
5) पृ. सं. 26, रवींद्र वर्मा, पत्थर ऊपर पानी, वाणी प्रकाशन
6) पृ. सं. 147, कृष्णा सोबती, समय सरगम, राजकमल प्रकाशन
7) पृ. सं. 89, रमेशचंद्र शाह, सफेद परदे पर, किताबघर प्रकाशन
8) पृ. सं. 42, रमेशचंद्र शाह, सफेद परदे पर, किताबघर प्रकाशन
9) पृ. सं. 42, रमेशचंद्र शाह, सफेद परदे पर, किताबघर प्रकाशन
10) पृ. सं. 45, सूरज सिंह नेगी, वसीयत, साहित्यागार
11) पृ. सं. 138, चित्रा मुद्गल, गिलिगड़ू, सामयिक प्रकाशन
12) पृ. सं. 213, सूरज सिंह नेगी, वसीयत, साहित्यागार

****